समाज-सेवा में नारी की भूमिका

□ श्रीमती मालती शर्मा

२५/२ पारवर, बम्बई-पूना मार्ग, पूना—३

धरती सी उर्वर और सहिष्णु हमारी मातृमयी संस्कृति में प्रकृति से ही नारी सेवा-रूपा और करुणाभूपा रही है। क्या इसे महज संयोग कहा जाय कि जीवन का आधार धरती, प्रेम, प्रकृति और ध्येय संस्कृति नारीरूपा है? जागृति, कर्म और मिलन विश्राम की बेलाएँ उषा, दोपहरी, सन्ध्या नारी वेषा है? बिना नारी शक्ति के शिव निर्जीव शव है? सेवा, सुश्रूषा और परिचर्या, सेवा-टहल के पर्याय ये तीनों शब्द नारी बोधक हैं? तथा सेवा भावना के उत्प्रेरक भाव दया, माया, ममता, करुणा नारी लिंगी है? सच पूछा जाय तो सेवा का दूसरा नाम नारी प्रकृति है। विश्व के समस्त जीव, समूचा विश्व ही नारी पक्षिणी के पंखों तले सेवा, पोसा जाकर ही ज्ञान की आँख और कर्म की पाँख पाता है; गति, शक्ति और भक्ति मुक्तिमय होता है। नाम की अबला नारी में बला की सेवाशक्ति है, उसकी मोहक आँखों में करुणा ममता का जल और आँचल में पोषक संजीवनी है। पालने से लेकर युद्ध क्षेत्र तक वही अपनी प्राणदायिनी सेवा-सुश्रूषा से 'न' में 'अर' लगाकर उसे नर—पुरुष बनाती है, चलाती-उठाती है। कुटुम्ब-परिवार कबीला हो या देश, राष्ट्र, युद्ध और शान्ति, क्रान्ति और भ्रान्ति की कैसी भी असमंजसमयी स्थितियाँ क्यों न हों—सबमें नारी ही समाज-सेवा की जगमगाती मशाल 'फलोरेन्स नाइटेंगिल' है।

अनादि काल से ही सेवा और नारी पर्यायवाची रहे हैं। तभी तो विश्व की, विशेषतः भारत की मनीषा धर्म, दर्शन, कला, संस्कृति की समस्त ऊँचाइयों में नारी माँ से ऊँची निस्पृह, निःस्वार्थ, त्याग, ममतामयी किसी दूसरी सेवा-मूर्ति की कल्पना नहीं कर सकी और आज भी क्या हम इस सेवा प्रतिमा के बिना पालना-घर, शिशु-गृहों, आश्रमों को चलाने की कल्पना कर सकते हैं? क्या नर्सों के बिना अस्पताल हो सकते हैं? कदापि नहीं।

पर ऐसा क्यों? आज तो यह प्रयोग, परीक्षण और आँकड़ों का सत्य है कि निसर्गतः ही नारी में पुरुष की अपेक्षा किसी भी एक रस कार्य को लम्बे समय तक करते रहने की अधिक सामर्थ्य, अधिक धैर्य है। वह दुःखों को, भारी कामों को उठाने वाली क्रेन तो नहीं मगर धारदार आरी जरूर है जो अनवरत अनथक चलती रहती है, और बड़े से बड़े ऊबाऊ काम को पार पाड़कर ही रहती है। पुरुष में वह माद्दा कहाँ कि दुखती आँखों की किरकिरी कोमल हथेली के स्पर्श से शमित कर दे, शीतला से बिलखते शिशु को छाती से लगाये कोरी आँखों रातें बिता दे, अपने मैले आँचल में दुनियाँ भर का दुःख कष्ट समेट उसी आँचल को दैवी मानवीय सारे वरदानों की छाया बना दे? वह नारी ही है जो ज्वर से तपते मस्तकों की शीतल पट्टी, सूखे ओठों की तरी, ठंडी गोद और चोट खाये हृदयों पर सान्त्वना भरा हाथ बन सकी है।

इस प्रत्यक्ष भूमिका में भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण है नारी की अप्रत्यक्ष भूमिका। घर हो या बाहर जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कहीं भी नारी की उपस्थिति मनोरम मधुर वातावरण को सृष्टि करती है। जहाँ वह होती है वहाँ का समा ही और होता है, हवा ही और बहती है। बृहद् धर्म पुराण कहता है—"गृहेषु तनया भूषा।" घर ही क्यों, कहीं भी नारी का होना उदासी और ऊब के क्षणों में प्रेरणा और रुचि जगा तरोताजगी लाता है। मैं विज्ञान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के एक वरिष्ठ प्रोफेसर को जानती हूँ जो अपनी सामान्य सी क्षीणकाय शोध सहायिका को समूचे विभाग की "जीवन हरियाली" कहा करते हैं। स्त्री सहयोगी होना अप्रत्यक्ष रूप से किसी भी वातावरण में व्यवस्था और संतुलन लाता है, क्रूर एवं अमानवीय वृत्तियाँ उभर नहीं पातीं, स्वतः ही पानी-पानी हो जाती हैं।

हमारे क्रांतदर्शी ऋषि इस सत्य से पूर्ण परिचित थे, उन्होंने सेवाभाव के लिये जरूरी सभी मूल प्रवृत्तियों के दर्शन नारी प्रकृति में किये हैं। यजुर्वेद का ऋषि कहता है—

इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति
एताते अघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मा सुकृत ब्रूतात्। —यजुर्वेद ८४/.३

जो उत्तम मधुरभाषिणी है, प्रसन्न करने वाली, पूजनीय, चाहने योग्य, आनन्द देने वाली प्रकाशमान ज्योति है। दीनभावना से रहित उत्तम ज्ञान सम्पादन करने वाली धरती सी सहिष्णु और विद्याओं की ज्ञाता है। देवता भी उस नारी का पुण्य कथन करते हैं, वह नारी कभी भी मारने योग्य नहीं है।

मानव-धर्म शास्त्रकार मनु ने प्रेम और शुश्रूषा करने में स्त्रियों को उत्तम माना है एवं उनके अधीन घरों को ही स्वर्ग की संज्ञा दी है—

अपत्यधर्मकार्याणि शुश्रूषा रतिरुत्तमा।
दाराधीनस्तथा स्वर्गः पितृणामात्मनश्च॥ —मनु०, अध्याय ३/६३

मानव सृष्टि के प्रारम्भ में कवि प्रसाद की नारी श्रद्धा सेवा का सार दया, माया, ममता, मधुरिमा और अगाध विश्वास, संसार-सागर को पतवार रूप में समर्पित कर विश्व की चालिका बन जाती है, वहीं भूलों का सुधार, उलझनों की सुलझन, जीवन के उष्ण विचारों का शीतलोपचार और दया, माया, ममता का बल लिये शक्तिमयी करुणा है, मूर्तिवान सेवा है।

पर इस सेवामूर्ति की सेवा-भूमिका भारतीय समाज में प्रमुख समाज के लघुसंस्कार परिवार के दारे में पुत्री, बहन, पत्नी, माता, दादी, नानी, मौसी, बुआ आदि विभिन्न पारिवारिक सम्बन्धों में ही आँकी गई। इनकी सेवा-सरहदें मानव से लेकर कीट-पतंगों, पशु-पक्षियों तक फैली हैं। किसी स्त्री से यदि ये रक्त वंश के सम्बन्ध नहीं भी होते तो आयु, गोत्र, गाँव के नाते मना बना लिये जाते हैं। गाँव, जवार, पुरवे, मुहल्ले में कोई न कोई ऐसी विधवा परित्यक्ता, अनाथ, एकाकी दीदी, बुआ, दादी, काकी, ताई अवश्य होती थी जो जन्ति-जापे में, हारी-बीमारी, ब्याह-शादी गमी में, सब समय सब जगह अपनी मूल्यहीन अयाचित सेवाएँ देती देखी जाती थी, मगर कभी भी उन्हें ग्राम सेविका का नाम तमगा नहीं मिला। किसी न किसी रिश्ते से ही पुकारा जाता रहा। आज के नगरीय समाज में नारी का यह स्वैच्छिक अयाचित सेवा रूप एक तरह से दुर्लभ ही हो गया है।

विश्व ही परिवार है। इस ग्रामीण संस्कृति के विस्तार में लोक ने सेवामूर्ति नारी के हाथ में सुबह-सुबह बुहारी और चक्की का हथेला, दोपहर को भोजन का थाल, छाक और बिजनी, शाम को तेलभरा दीपक और रात को जल की झारी देखी सौंपी है। हर पल, हर क्षण नूतन सृजन, रक्षण, पोषण और तृप्ति देना, रोग-शोक, मलिनता, अन्धकार भगाना उसके जिम्मे पड़ा है।

जन्म-मरण और लगन में लोक के विस्तृत सेवक समाज की क्या स्थिति है? यहाँ दाई है, कुम्हार के साथ कुम्हारिन, नाई के साथ नाइन, धोबी के साथ धोबिन है, भंगी के साथ भंगिन है, लुहारिन, तेलिन, तमोलिन, कोरिन, मालिन, काछिन, बारिन, चमारिन, बढ़इन हैं। खेत-खलियान, बारी-फुलबारी में, जंगलों में, घानी-धानी पर निरन्तर सेवारत। ग्राम्य समाज की कोई भी सेवा नारीरहित नहीं, अयुग्म नहीं। हमारा लोक बिना मालिन-माली की और बिना फूली डाली की कल्पना तक नहीं करता, न उसका जीवन ही बिना नारी के एक पग चल पाता है। बीज से वृक्ष तक उसे नारी की सेवा का रस सिंचन चाहिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैसे तो समाज में सदैव से ही सेवा के अनेक रूप, प्रकार रहे हैं। कुछ सेवाएँ मूल्ययुक्त होते हुए भी मूल्यांकन से परे हैं, कुछ कही तो अमूल्य जाती हैं पर हैं दो कौड़ी की। कहीं मूक सेवा है, कहीं शाब्दिक, आर्थिक और कायिक सेवा है तो कहीं केवल कागजी और दिमागी सेवा ही है। पर इनमें दो रूप तो प्रमुख और सर्वमान्य हैं—पेशेवर सेवाएँ तथा स्वैच्छिक सेवाएँ।

मध्ययुगीन भारतीय समाज में नारी की क्रीतदासी और वेतन-पोषण-भोगी—दोनों रूपों में सेवा भूमिका रही है। दासियों की बाकायदा खरीद-फरोख्त होती थी, दहेज में लिया जाता था, वे स्वामी की सम्पत्ति होती थीं। इस युग के साहित्य और इतिहास में राज-राजवाड़ों में सम्पन्न घरानों में चेरी, दासी, लौंडी, बाँदी, गोली, दूती, सेविका और धाय आदि सेवारत नारियों के प्रचुर उल्लेख हैं। सेविकाओं के ये अनेक पर्याय एक ओर जहाँ राजकीय तन्त्र-मन्त्र षडयन्त्र में नारी के मनमाने उपयोग, क्रूर शोषण, उत्पीड़न और दासी से रानी के मान-सम्मान की दास्तान हैं तो दूसरी ओर पन्ना धाय की चरमोत्कर्षमयी कहानी भी। दक्षिणी प्रान्तों में अभी भी कुछ घरों में वंशानुगत घरेलू सेवाओं की परम्परा जीवित है।

बौद्धयुगीन कलारूपों, भित्ति एवं गुफा चित्रों से भी ज्ञात होता है कि ये सेविकाएँ अनेक कला निपुण और नियत सेवा की विशेषज्ञा होती थीं। तदनुसार ही उनके नाम भी ताम्बूलवाहिनी, चंवरधारिणी, वीणा-वादिनी, सैरन्ध्री इत्यादि हुआ करते थे। पांडवों के अज्ञातवास-काल में स्वयं द्रौपदी ने विराटराज के यहां सैरन्ध्री का कार्य किया था।

दासियों-सेविकाओं का एक वर्ग विविध धर्मों से सम्बद्ध भी था। जिसका मेरु सुमेरु है दक्षिण की देवदासी प्रथा। महाराष्ट्र में ये दासियाँ देवता की मुरली पुकारी जाती हैं। मन्दिरों की सेवा में ही इनका जीवन होम होता है। इसी युग में बौद्ध भिक्षुणियों और जैन साध्वियों की त्याग-तपमयी और शैव-शाक्त मत की भैरवियों की जागरणमयी भूमिकाएँ भी हैं जो अविस्मरणीय हैं। वस्तुतः यह तो एक शोध का पृथक् विषय होगा। निष्कर्षतः इतना ही कहा जा सकता है कि मध्ययुग में नारी और उसकी सेवाएँ समाज में अर्जित उपलब्ध सम्पत्ति थीं, जीवन का कोई मूल्य नहीं। यह दूसरी बात है कि इस युग में और अब तक भी मध्यवर्ग की गृहणी की दासी कहलाने में गौरवान्वित थी।

सांस्कृतिक पुनर्जागरण, स्वातन्त्र्य आन्दोलन और पश्चिमी सम्पर्क के आधुनिक युग में नारी विविध सामाजिक क्षेत्र में अधिकाधिक बाहर आई। वर्जित क्षेत्रों में प्रवेश हो उसके सेवा क्षितिज, फलक का अभूतपूर्व विस्तार हुआ। महर्षि दयानन्द, विवेकानन्द और महात्मा गाँधी के सक्रिय प्रयत्नों ने उसे वस्तु से व्यक्ति में बदल मानवीय गौरव दिया। एक बार फिर से नारी की वही प्राचीन निस्पृह, निःस्वार्थ, करुणा, ममतामय मगर तेजस्वी सेवामूर्ति, राजनैतिक-सामाजिक जीवन के हर केन्द्र, गली, सड़क, चौराहों पर आश्रमों, निरसश्रय गृहों में, विराटरूप में साकार हो उठीं, जीवन का कोई क्षेत्र उससे अछूता न बचा। वास्तव में इस काल खण्ड की नारी सेवाएँ नारी के नारीत्व, आत्मविश्वास, स्वाभिमान की जागृति एवं रक्षा तथा पवित्रता और गौरव के स्वीकार के साथ जगह स्त्री-पुरुष सहयोग के अनल-अक्षर हैं। कुछ नाम तो चरमत्याग, बलिदान और समर्पणभाव की अप्रतिम मिसाल हैं।

आजादी के बाद वेतनभोगी सामाजिक सेवाओं में नारी का प्रवेश अधिकाधिक हुआ यहाँ तक कि पूर्व-वर्जित क्षेत्र पुलिस, न्यायिक व सेना (केवल वायु सेना) सेवाओं में भी उसकी प्रविष्टि हुई। मगर साथ ही स्वैच्छिक सेवाएँ भी अधिकाधिक संस्थाप्रेक्षी हो गई। एक बार तो ऐसी सेवा संस्थाओं की बाढ़ सी आई लगी। इसके पीछे ईसाई मिशनरियों की प्रेरणा भी कम न थी पर मिशन की तापसियों (Nun) के उत्साह, करुणाभाव, कर्तव्यपरायणता और सच्चाई को ये छू भी न सकीं। यह कहा जा सकता है कि मिशन का मिशन ही भिन्न था। अधिकांश में नव-धनाढ्य वर्ग, प्रतिष्ठित प्रशासनिक सेवाएँ व सेना अधिकारियों की पत्नियों के प्रभाव क्षेत्र ऐसे कल्याण तथा राहत सेवा कार्य उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रभामंडल अधिक बने, सहायता, सेवा-शुश्रूषा के स्रोत कम। निचले तबके तक तो कुछ पहुँच ही नहीं सका। वही बात कि रोशनी तो हुई पर फ्लैशलाइट की, कि फोटो उतरने के बाद अंधेरा ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंधेरा। एक तरह से आजादी से पहले की निःस्वार्थ सेवाभाव की वह सुगन्ध ही गायब हो गई। सामाजिक कुप्रथा, कुरीतियों, रूढ़ियों के विरुद्ध जागरण काल में छिड़ी आन्दोलनपूर्ण सामाजिक सेवाएँ काफी हद तक पश्चिमी "वीमेन्स-लिब" की बन्द गली में भटक गई। यद्यपि सेवामूर्ति मदर टेरेसा, भूखों के लिए झूठन एकत्र करती बम्बई की मेहता बहन जैसी स्वैच्छिक सेवाएँ अभी भी विद्यमान हैं, मगर ऐसे रूपों का उद्गम वही पिछला काल खण्ड है। पिछले डेढ़ दशक में राष्ट्रीय चरित्र पतन का सीधा प्रभाव समाज सेवाओं ने भुगता है समाज-सेवक और समाज सेविका शब्द का अवमूल्यन ही होता गया है।

वैसे आज पुलिस, रेल्वे, टेलीफोन, विमान सेवाओं, सेल्सगर्ल, निजी सचिव, शिक्षा व राजस्व, औद्योगिकी, यान्त्रिकी आदि सभी सेवाओं में नारी है। समाजकल्याणकारी राज्य और ग्राम विकास की अवधारणाओं ने ग्राम-सेवक के साथ ग्राम-सेविकाएँ भी दी हैं पर दुखती रग वही है कि क्या स्वतन्त्रता के तीन दशकों में भी हमारे समाज में ऐसा वातावरण बन सका है जहाँ नारी बिना शोषित हुए अपनी सेवाएँ दे सके? उसे स्त्रीत्व की रक्षा का अभय, सुरक्षा एवं उचित प्रतिदान के साथ अपना कार्य करने की छूट, खुलापन नसीब हो? विभिन्न समाजसेवाओं में लगी, यहाँ तक कि आपादसेवामूर्ति अस्पताल की नर्सों से भी कितनी और कैसी-कैसी सेवाएँ ली जाती हैं ये अब अखबारों की सुर्खियाँ हैं, आँखों देखी हैं, अज्ञात तथ्य नहीं।

हमारे समाज के अर्धांश नारी और नारी की आधी कार्यशक्ति इसी वातावरण और सुरक्षा की चिन्ता में बन्द रह जाती है, मिट जाती है कि महिला होकर अमुक-अमुक जगह कैसे जायँ, अमुक कार्य कैसे करें? असामाजिक तत्त्वों का निरन्तर भय आज भी नारी द्वारा सेवा के अवसर और क्षेत्र संकुचित किये हैं।

अभी टेलीफोन आपरेटरों ने माँग की, उन्हें रात की ड्यूटी न दी जाय, क्यों?

महिला डाक्टर द्वार पर तख्ती लगाती है ९ बजे के बाद विजिट संभव नही, क्यों?

ग्राम-सेविकाएँ शिकायत करती हैं कि ग्राम सरपंच उन्हें निरीक्षण के लिये आये अधिकारियों की मेज पर परोस देते हैं, नहीं तो तरह-तरह की धमकियाँ, क्यों?

गोंडा की निरीह नर्सें अपने आवास में गुण्डों से पीड़ित अपमानित होती है, क्यों?

मंदा के आंसू थमने का नाम नहीं लेते—"बीबीजी, अब हम काम ना करी, हमार भी इज्जत आबरू है—साहब.....?"

नारी समाज सेवा के क्षेत्र से ये चीखते-चीरते घटना प्रमाण अनायास ही कलम की नोंक पर उतर आये हैं, ये और इन जैसी बहुत सी आये दिन होती अनपेक्षित घटनाएँ क्या घोषित करती हैं कि अभी भी हमारे समाज में सामन्तयुगीन संस्कारों के प्रेत जिन्दा हैं, कि अभी भी नारी भोग-मनोरंजन की वस्तु, यौनाकर्षण की छमछम गुड़िया है कि हमारा समाज अभी भी इस योग्य नहीं कि वह सेवाशक्ति की अजस्र स्रोत नारी की क्षमता का पूरा उपयोग कर सके, कि हमारे समाज ने सेवा की जागती मशाल, सामाजिक स्वास्थ्य की एक्सरे और कोबाल्ट किरण नारी से अपने देह मन प्राण को, गाँव, नगर, राष्ट्र को रोगमुक्त कर स्वस्थ सबल नहीं बनाया, प्रकाशित नहीं किया, कालिख ही बटोरी है।

हमारा समाज ऐसा कब होगा? क्या सचमुच हम ऐसा कुछ भी नहीं कर सकते कि नारी, नारी रूप में अक्षुण्ण रहे, चौखट बाहर निरापद, निर्भीक भाव से समाज को अपनी सेवाएँ दे सके?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org